प्राकृत व पाली साहित्य के परिपेक्ष्य में वातवलय

धरणेन्द्र जैन

अतिथि व्याख्याता एवं शोधार्थी

मोहनलाल सुखाड़िया विश्वविद्यालय,

उदयपुर राज0, मो. 9782864471

Email- dharnendra8@gmail.com

सारांश :–

बहुमूल्य प्राचीन भारतीय साहित्य की समृद्ध परंपरा में प्राकृत साहित्य का महत्वपूर्ण स्थान है। प्राकृत साहित्य में अध्यात्म एवं दर्शन के साथ लोक का भी विस्तृत वर्णन किया गया है। अनंत आकाश के बहुमध्य भाग में लोक है जिसमें छहों द्रव्य रहते हैं इस लोक के तीन भाग होने से इसकी तीनलोक संज्ञा है। इस सम्पूर्ण लोक को पुरूषाकार माना गया है इस पुरूषाकार तीन लोक का आधार वातवलय हैं। लोक को सब ओर से घेरकर स्थित वायु के वलय को वातवलय कहते हैं। ये तीन होते हैं। घनोदधि वातवलय, घनवातवलय और तनुवातवलय। इनमें घनोदधि गोमूत्र के समान वर्ण वाला, घनवात मूंग के समान वर्ण वाला तथा तनुवात परस्पर मिले हुए अनेक वर्णों वाला है। ये तीनों दंडाकार लंबे, घनीभूत, ऊपर, नीचे तथा लोक के चारों ओर स्थित हैं। वातवलयों का विस्तृत वर्णन बहुमूल्य प्राकृत साहित्य के तिल्लोयपण्णति, त्रिलोकसार, वियाहपण्णत्ति, बृहत् संग्रहणी, आदि ग्रंथों में मिलता है।

तीन लोक घनोदधि वातवलय के आधार से अवस्थित है। घनोदधि वातवलय, घन वातवलय के आधार तथा घन वातवलय, तनु वातवलय के आधार से अवस्थित है। और तनु वातवलय आकाश के आधार से अवस्थित है जैसे– चमड़ी शरीर को चारों ओर से घेरे रहती है या जैसे–छाल वृक्ष को चारों ओर से घेरे रहती है, वैसे ही ये तीनों वातवलय चारों ओर से लोक को घेरे हुए हैं। लोक के नीचे तथा दोनों पार्श्व भागों में नीचे से एक राजू की ऊँचाई तक अर्थात् जहाँ तक पांच स्थावर रहते हैं एवं सातों भूमियों (नरकों) के नीचे तीनों वातवलय 20–20 हजार योजन मोटे हैं। दोनों पार्श्व भागों में एक राजू के ऊपर सप्तम पृथ्वी (नरक) के निकट आठों दिशाओं में तीनों वातवलय क्रमशः 7, 5, 4 योजन मोटे हैं। फिर क्रमशः घटते हुए मध्य लोक की आठों दिशाओं में 5, 4, 3 योजन मोटे रह जाते हैं। फिर क्रमशः बढ़ते हुए ब्रह्मलोक की आठों दिशाओं में 7, 5, 4 योजन मोटे हो जाते हैं, फिर ऊपर क्रमश घटते हुए लोकाग्र के पार्श्व भाग में 5, 4, 3 योजन मोटे रह जाते हैं। ये तीनों वातवलय लोक शिखर पर क्रमशः 2 कोस (4000 धनुष), 1 कोस (2000 धनुष) एवं 1575 धनुष मोटे रह जाते हैं। अधोलोक में सातों पृथ्वीयाँ ऊर्ध्वदिशा को छोड़कर शेष नौ दिशाओं में घनोदधि वातवलय से घिरी हुई हैं। ऊर्ध्व लोक में सौधर्म युगल के विमान घनस्वरूप जल के ऊपर तथा माहेंद्र व सनत्कुमार कल्प के विमान पवन के ऊपर स्थित हैं। ब्रह्मादि चार कल्प जल व वायु दोनों के ऊपर, तथा आनत प्राणत आदि शेष विमान शुद्ध आकाशतल में स्थित हैं।

बौद्धमतानुसार लोक के अधोभाग में 1600000 योजन ऊँचा अपरिमित वायुमंडल है इसके ऊपर 1120000 योजन ऊँचा जलमंडल है, इस जलमंडल के बीच में 320000 योजन भूमंडल है इसके बीच में मेरु पर्वत हैं। आधुनिक खगोल विज्ञान पृथ्वी के चारों ओर जिस वायु मंडल को स्वीकार करता है क्या उसे जैन आगम में वर्णित वातवलय माना जा सकता है ? आगम साहित्य में वर्णित वातवलय का स्वरुप, आकार, विस्तार, तथा रंग क्या है, वातवलय कितने प्रकार के हैं ? तीन लोक में वातवलयों की अवस्थिति क्या है ? क्या पृथ्वी के वायुमंडल और प्राकृत साहित्य में वर्णित वातवलय में कोई संबंध है ? वर्तमान संदर्भ में वातवलय की क्या भूमिका है ? प्राकृत व पाली साहित्य में वातवलयों के विभिन्न प्रमाण ? आदि का विस्तृत वर्णन उपर्युक्त आलेख में किया गया है।

कठिन शब्द :– जगत्प्रतर, जगच्छ्रेणी, घनोदधि, तनुवात, घनवातवलय, सुप्रतिष्ठक, राजू, योजन।

भारतीय दर्शनों में से चार्वाक को छोडकर शेष सभी दर्शनों में लोक के स्वरूप, आकार, संरचना, विस्तार आदि का वर्णन अपने–अपने ढंग से किया गया है। लोक शब्द का अर्थ है ऐसा स्थान विशेष जहां प्राणी रहते हैं वह

लोक है। उसे संसार, विश्व अथवा दुनिया कहा जाता है। प्राकृत साहित्य में लोक के स्वरूप का वर्णन निम्नप्रकार मिलता है –

जे लोक्कई सो लोए [1] अर्थात् जिसका लोकन या प्रलोकन किया जाए वह लोक है।

धम्मो अहम्मो आगासं, कालो पोग्गल जंतवो।

एस लोगु त्ति पण्णत्तो, जिणंहिं वरदंसिहिं।। [2]

अर्थात् धर्म, अधर्म, आकाश, काल, पुद्गल और जीव इन छह द्रव्यों वाला लोक है ऐसा केवलज्ञानी जिनेन्द्र ने कहा है।

जीवादिपयट्ठाणं समवाओ सो णिरूच्चए लोगो [3] अर्थात् जीवादि पदार्थों के समवाय को लोक कहते हैं।

दंसंति जत्थ अत्था, जीवादीया स भण्णदे लोओ [4] अर्थात् जहॉ जीवादि पदार्थ देखे जाते हैं, वह लोक कहलाता है।

धम्माधम्मा कालो पुग्गलजीवा य संति जावदिये।

आयासे सो लोगो तत्तो परदो अलोगुत्तो।। [5]

अर्थात् धर्म, अधर्म, काल, पुद्गल और जीव ये पॉच द्रव्य जितने आकाश में रहते हैं, वह लोकाकाश है। उस लोकाकाश से बाहर अलोकाकाश है।

लोक की उत्पत्ति और विनाश –

लोक की उत्पत्ति और विनाश के सम्बंध में विभिन्न दर्शनों में पृथक–पृथक मान्यताएं हैं। आधुनिक विज्ञान इसे दो रूपों में देखता है पहली स्टैडी स्टेट थ्योरी और दूसरी बिंग बैंग थ्योरी। पहली स्टैडी स्टेट थ्योरी के अनुसार यह विश्व जैसा आज है, पहले भी वैसा ही था और भविष्य में भी वैसा ही रहेगा। इसका न आदि है और न ही अंत है। अनादि–अनंत शाश्वत मान्यता ही इस परिकल्पना का मूल आधार है। समय के अनुसार इसमें परिवर्तन होते रहते हैं।[6]

दूसरी वैज्ञानिक कल्पना बिग बैंग थ्योरी इस प्रश्न का उत्तर देने की कोशिश करती है कि यह विश्व कैसे बना ? इसके अनुसार एक लम्बे अनुसंधान के पश्चात् 4 जुलाई 2012 को वैज्ञानिकों ने यह दावा किया कि वह कण खोज लिया गया है, जिससे ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति हुई है। वैज्ञानिकों ने उसे **गॉड पार्टिकल** नाम दिया और इससे भविष्य में सैकडों गुत्थियों को सुलझाने का दावा किया। परन्तु इससे ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति आदि सम्बन्धी कितने रहस्य खुलेंगे यह तो भविष्य ही बताएगा। [7]

प्राकृत साहित्य के अनुसार लोक का स्वरूप अकृत्रिम है इसे किसी ने बनाया नहीं है यह अनादि से है और अनंतकाल तक रहेगा यह कभी नष्ट नहीं होगा। अतः यह अनादि–निधन है। तिलोयपण्णत्ति ग्रंथ में आचार्य यतिवृषभ लिखते हैं –

आदि णिहणेण हीणो, पयडिसरूवेण एस संजादो।

जीवाजीवसमिद्धो, सव्वण्हावलोइओ लोओ।। [8]

---

[1] भगवती सूत्र 5/9/160

[2] उत्तराध्ययन सूत्र, 28/7

[3] वारसाणुवेक्खा गाथा 38

[4] कार्तिकेयानुप्रेक्षा गाथा 121

[5] द्रव्यसंग्रह गाथा 20

[6] जिनागम के आलोक में तीन लोक पृ. 5

[7] वही पृ. 6

[8] तिलोयपण्णत्ति 1/133

सर्वज्ञ भगवान द्वारा देखा गया यह लोक आदि और अंत रहित अर्थात् अनादि–अनंत है। यह स्वभाव से ही उत्पन्न हुआ है और जीव एवं अजीव द्रव्यों से व्याप्त है। त्रिलोकसार में आचार्य नेमीचन्द्र सिद्धान्त चक्रवर्ती लिखते हैं कि वस्तुतः यह लोक अकृत्रिम है, अनादिनिधन है, स्वभाव से ही निर्मित है, जीव व अजीव द्रव्यों से व्याप्त है, सम्पूर्ण आकाश का ही एक भाग है तथा नित्य है।[9]

करकंडचरिउ में मुनिकनकामर कहते हैं कि जैसे– गगनांगन में रवि रहता है, उसी प्रकार लोक को कोई धारण करने वाला नहीं है, जैसे आकाश क्रियाविहीन है वैसे ही लोक अकृत्रिम है।[10]

लोक का स्थान :–

प्राकृत साहित्य में प्ररूपित लोक अनंत आकाश के बहुमध्यभाग में स्थित है। जिसमें जीव, पुद्गल, धर्म, अधर्म, आकाश और काल यह छः द्रव्य व्याप्त हैं। तिलोयपण्णत्ति के अनुसार जितने आकाश /क्षेत्र में धर्म और अधर्म द्रव्य कि निमित्त से होने वाली जीव और पुद्गलों की गति और स्थिति हो, उसे लोकाकाश समझना चाहिये। छह द्रव्यों से सहित यह लोकाकाश का स्थान निश्चय ही स्वयं प्रधान है, इसकी सब दिशाओं में नियम से अनंत शुद्ध अलोकाकाश स्थित है।[11] आचार्य कार्तिकेय स्वामी के अनुसार आकाश द्रव्य का क्षेत्र अनंत है, उसके बहुमध्य भाग में लोक स्थित है।[12] मूलाचार के अनुसार लोक एक, दो, तीन, चार, पॉच और अनेक प्रकार का है।[13] निक्षेप के आधार पर लोक 9 प्रकार का है। नाम, स्थापना, द्रव्य, क्षेत्र, चिह्न, कषाय, भव, भाव और पर्याय।[14] तिलोयपण्णत्ति के अनुसार लोक तीन प्रकार का है उर्ध्वलोक, मध्यलोक, अधोलोक। धवला के अनुसार लोक पॉच प्रकार का है अधोलोक, मनुष्यलोक, तिर्यकलोक, उर्ध्वलोक, और सामान्यलोक।[15]

लोक को एक निश्चित आकार है। किसी व्यक्ति द्वारा अपने दोनों पैर फैलाकर, दोनों हाथ कमर के उपर रखकर खडा होने पर जो आकृति बनती है, वह लोकाकृति है।[16] इसके लिए **पुरूषाकार** शब्द का प्रयोग किया गया है।[17] भगवती सूत्र में लोक के लिए **सुप्रतिष्ठक** आकार शब्द का प्रयोग किया गया है।[18] इसका अर्थ है कि लोक का आकार **त्रिशरावसम्पुटाकार** है अर्थात् तीन शिकोरों में से एक को उल्टा रखें, फिर दूसरे को उसके ऊपर सीधा एवं तीसरे को फिर उसके उपर उल्टा रखने पर जो आकार बनेगा, वही त्रिशरावसम्पुटाकार लोक है।

लोक का आधार :–

अनंत आकाश के बहुमध्यभाग में स्थित लोक वातवलय के आधार से प्रतिष्ठित है। जिस प्रकार वृक्ष छाल से वेष्टित रहता है, उसी प्रकार लोक तीन वातवलयों से वेष्टित है। लोक घनोदधि वातवलयके आधार से अवस्थित है, घनोदधि वातवलय, घन वातवलय के आधार से अवस्थित है तथा घन वातवलय तनु वातवलय के आधार से अवस्थित है। तिलोयपण्णत्ति में यतिवृषभ आचार्य कहते हैं –

पढमो लोयाधारो, घणोवही इह घणाणिलो तत्तो

तप्परदो तणुवादो, अंतम्मि णहं णिआधारं ।।[19]

---

[9] त्रिलोकसार गाथा 4

[10] गयणंगणे रवि अच्छेइ जेव एह भुवणु ण केण वि धरिउ तेव......। करकंडचरिउ संधि 9 पृ. 131

[11] तिलोयपण्णत्ति 1/134–135

[12] कार्तिकेयानुप्रेक्षा गाथा 115

[13] मूलाचार गाथा 713

[14] मूलाचार गाथा 543

[15] धवला पुस्तक 4 वृ. 31

[16] पाण्डव पुराण 25/108

[17] क्षत्रचूडामणि 11/70–72

[18] भगवती सूत्र 7/3

[19] तिलोयपण्णत्ति गाथा 272

अर्थात् लोक के अन्त में, चारों ओर घेरे हुये सर्वप्रथम घनोदधि वातवलय का आधार है। इसके चारों ओर घन वातवलय तथा उसके पश्चात् तनु वातवलय का आधार है, फिर अन्त में निजाधार आकाश है। 343 घनराजू प्रमाण लोक की सीमा पर चारों ओर से घेरे हुये तीन वातवलय हैं।

वातवलय :– वायु के वलय को वातवलय कहते हैं।

वातवलय के प्रकार :–

वातवलय तीन हैं – घनोदधि वातवलय, घन वातवलय, तनुवातवलय।

घनोदधि वातवलय :– घन + उदधि + वात + वलय = घनोदधि वातवलय। अर्थात् जल मिश्रित घनी हवा का घेरा। इसे वाष्प भी कह सकते हैं। इसमें सबसे ठोस वायु है। यह गोमूत्र के वर्ण वाला है।

घन वातवलय :– घनोदधि वातवलय को चारों ओर से वेष्टित करके घन वातवलय है, यह ठोस/घनी हवा का घेरा है। जिसे मोटी हवा भी कहा जाता है। इसका रंग मूंग के समान वर्ण वाला है।

तनु वातवलय :– घन वातवलय को चारों ओर से वेष्टित करके तनु वातवलय है, जो कि पतली हवा का घेरा है। यह अनेक रंगों वाला है। तनु वातवलय ही लोक का अन्त है, इसके पश्चात् निजाधार अनंत आकाश है, उसे किसी दूसरे आधार की आवश्यकता नहीं है। वह सबसे बड़ा है, तथा स्वयं के आधार से अवस्थित है।

यह तीनों वातवलय लोकाकाश को सब ओर से घेरे हुए हैं। अधोलोक में सात पृथ्वियां हैं रत्नप्रभा, शर्कराप्रभा, बालुकाप्रभा, पंकप्रभा, धूमप्रभा, तमप्रभा, महातमप्रभा। इनमें क्रमशः सात नरक बने हुए है। सातों (नरक) पृथिवियाँ ऊर्ध्वदिशा को छोड़कर शेष नौ दिशाओं में घनोदधि वातवलय से लगी हई हैं,। अर्थात् घनोदधि वातवलय के आधार से अवस्थित हैं। घनोदधि वातवलय, घनवातवलय के आधार से, घनवातवलय तनुवातवलय के आधार से तथा तनुवातवलय आकाश के आधार से अवस्थित है। तथा आकाश का कोई भी अवलंबन नहीं है। परंतु आठवीं पृथिवी जिसे ईषत्प्राग्भार नाम दिया गया है वह दशों दिशाओं में ही वातवलय को छूती है। अर्थात् उसकी दशों दिशाओं में वातवलय हैं।

उर्ध्वलोक में सौधर्म युगल के विमान घनस्वरूप जल के ऊपर तथा माहेंद्र व सनत्कुमार कल्प के विमान पवन के ऊपर स्थित हैं।[20] ब्रह्मादि चार कल्प जल व वायु दोनों के ऊपर, तथा आनत प्राणत आदि शेष विमान शुद्ध आकाशतल में स्थित हैं।[21]

इतने विशाल लोक को हवा के आधार से टिके होने में कोई अतिशयोक्ति नहीं है क्योंकि हवा यदि सघन हो और उसे निकलने की जगह न हो तो वह अपने ऊपर भारी से भारी वस्तु को भी टिकाये रख सकती है। हवा के प्रेशर एवं ताकत को दैनिक जीवन में अनेक स्थानों पर देखा जा सकता है। हाईवे पर चलने वाले ट्रक के टायर में 35–40 पौंड हवा भरी हुई होती है और वे टायर अपने ऊपर 20–25 हजार किलो वजन लेकर आसानी से चलते हैं। वे सब हवा के आधार पर ही चलते हैं, यदि टायर में हवा न हो तो किंचित् भी न चल सकें।[22]

अतः यह स्वीकार्य है कि जैन दृष्टि से प्ररूपित लोक वातवलयों के आधार से टिका है। यद्यपि वायु अस्थिर स्वभाव वाली होती है, फिर भी ये तीनों वातवलय स्थिर स्वभाव वाले वायुमण्डल हैं[23] अर्थात् यह हवा चलती नहीं है, बहती नहीं है।

वातवलयों का विस्तार :–

लोक में वातवलयों का विस्तार भिन्न–भिन्न स्थानों पर भिन्न–भिन्न है। लोक के तल भाग में 1 राजू की ऊँचाई तक इन वातवलयों में से प्रत्येक की मोटाई 20,000 योजन प्रमाण है। सातवीं नरक/पृथ्वी के दोनों ओर इन

---

[20] तिलोयपण्णत्ति, गाथा 206
[21] वही, गाथा 207
[22] जिनागम के आलोक में तीन लोक, पृष्ठ 22
[23] त्रिलोक भास्कर पृष्ठ 5

वातवलयों की मोटाई भीतर से बाहर की ओर क्रमशः 7, 5 व 4 योजन है। मध्यलोक के पूर्व–पश्चिम भाग में इनकी मोटाई क्रमशः 5, 4 व 3 योजन, इससे ऊपर ब्रह्मस्वर्ग के पार्श्वभाग में क्रमशः 7, 5 व 4 योजन तथा लोक के अन्त (पार्श्वभाग) में इनकी मोटाई क्रमशः 5, 4 व 3 योजन प्रमाण है। लोक के शिखर पर तीनों वातवलयों की मोटाई मात्र 2 कोस, 1 कोस तथा 1575 धनुष है।[24] अधोलोक में सातपृथ्वियों के नीचे वातवलयों की मोटाई क्रमशः 20–20 हजार योजन प्रमाण है।

लोक के नीचे तीनों पवनों का बाहुल्य 60 हजार योजन है। इनकी लम्बाई–चौंड़ाई जगच्छ्रेणी की दक्षिणोत्तर चौंड़ाई का नाम भुजा तथा पूर्व–पश्चिम चौड़ाई का नाम कोटि है। भुजा और कोटि का परस्पर गुणा करने से जगत्प्रतर की प्राप्ति होती है।[25]

अर्थात् नीचे तीनों पवनों से अवरूद्ध क्षेत्र का क्षेत्रफल – जगत्प्रतर × 60 हजार ।

लोक के 1 राजू उपर पूर्व–पश्चिम में अवरूद्ध क्षेत्र का क्षेत्रफल – जगत्प्रतर / 17 × 120000 / 1

लोक के 1 राजू उपर दक्षिणोत्तर में अवरूद्ध क्षेत्र का क्षेत्रफल – जगत्प्रतर × 5520000 / 343

सातवीं पृथ्वी से मध्यलोक तक पूर्व–पश्चिम में अवरूद्ध क्षेत्र का क्षेत्रफल – जगत्प्रतर × 24

सातवीं पृथ्वी से मध्यलोक तक दक्षिणोत्तर में अवरूद्ध क्षेत्र का क्षेत्रफल – जगत्प्रतर × 600 / 49

उर्ध्वलोक के चार पार्श्व भागों का पूर्व–पश्चिम में अवरूद्ध क्षेत्र का क्षेत्रफल – जगत्प्रतर × 28

उर्ध्वलोक के चार पार्श्व भागों का दक्षिणोत्तर में अवरूद्ध क्षेत्र का क्षेत्रफल – जगत्प्रतर × 12

लोग के अग्रभाग पर वातवलयों से अवरूद्ध क्षेत्र का क्षेत्रफल – जगत्प्रतर / 7 × 303 / 320

वातवलयों द्वारा अवरूद्ध सम्पूर्ण क्षेत्र का क्षेत्रफल = जगत्प्रतर × 10241983487 / 109760 [26]

सातवीं नरक के नीचे 20000 योजन मोटा घनोदधि वातवलय, उसके नीचे असंख्य हजार योजन मोटा घनवातवलय, उसके नीचे असंख्य हजार योजन मोटा तनुवातवलय है।[27]

बौद्धमतानुसार वातवलय :–

आचार्य वसुबंधू कृत अभिधर्म कोश अनुसार लोक के अधोभाग में 1600000 योजन ऊँचा अपरिमित वायुमंडल है इसके ऊपर 1120000 योजन ऊँचा जलमंडल है, इस जलमंडल के बीच में 320000 योजन भूमंडल है इसके बीच में मेरु पर्वत हैं। यह 168 योजन उॅचा है।[28] अर्थात् पृथ्वी के नीचे तीन तत्व हैं जल, वायु और आकाश। सर्वप्रथम जल तत्व है जिसकी गहराई 1120000 योजन मानी गई है। यह पृथ्वी को स्थितरता प्रदान करता है। इसके नीचे वायु तत्व है जिसकी गहराई जल से दो गुना मानी जाती है। यह वायु तत्व जल को धारण करता है और पृथ्वी के नीचे इसकी संरचना का महत्वपूर्ण हिस्सा है। बौद्ध ग्रंथों भी अधोलोक में नरकों का वर्णन मिलता है। यहां 8 नरक बताए गये हैं। नरकों का आधार अनंत आकाश है। बौद्ध सृष्टि विज्ञान का उद्देश्य भौतिक माप देने से अधिक नैतिक और आध्यात्मिक दिशा में ध्यान केंद्रित करना है। पृथ्वी के नीचे की गहराई, जल और वायु तत्वों की विशालता, और नरक लोकों का असीम विस्तार, सब जीवन के कर्मों और उनके परिणामों की गहराई को दिखाने के लिए हैं। इन मापों का वास्तविक दुनिया से भौतिक संबंध कम और आध्यात्मिक संबंध अधिक है।

---

[24] तिलोयपण्णत्ति गाथा 271–276
त्रिलोक भास्कर गाथा 124–126

[25] त्रिलोकसार गाथा 127

[26] त्रिलोकसार गाथा 127 से 140 तक

[27] आओ लोक की सैर करें पृष्ठ संख्या 6

[28] अभिधर्म कोश

पृथ्वी के बाहरी मंडल का अंतिम तत्व आकाश या शून्यता है। यह आकाश तत्व असीमित है। और समस्त ब्रह्माण्ड को घेरता है। शून्यता बौद्धधर्म में एक महत्वपूर्ण अवधारणा है, जो यह दर्शाती है कि अंततः सभी वस्तुएं खाली और अस्थायी हैं।

आधुनिक विज्ञान और वातवलय :—

आधुनिक खगोल विज्ञान के अनुसार वातवलय से तात्पर्य वायुमण्डल या वायु के घेरे से है, जो पृथ्वी या किसी अन्य ग्रह के चारों ओर होता है। इसे वातावरण भी कहा जाता है, यह गैसों का मिश्रण होता है, जो जीवन के लिए आवश्यक होता है और बाहरी अंतरिक्ष से पृथ्वी को सुरक्षित रखता है। वायुमंडल की सबसे बाहरी परत बाह्ममंडल है यह पृथ्वी और बाह्म अंतरिक्ष के बीच सीमा के रूप में कार्य करता है। प्राकृत आगम में वर्णित वातवलय भी लोकाकाश और अलोकाकाश के मध्य सीमा के रूप में कार्य करते हैं।

पृथ्वी के चारों ओर के वायु मण्ड़ल में 500 मील तक उत्तरोत्तर तरलता जैन मान्य वातवलयोंवत् ही है।[29]

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. भगवती सूत्र 5/9/160
2. उत्तराध्ययन सूत्र, 28/7
3. वारसाणुवेक्खा गाथा 38
4. काार्तिकेयानुप्रेक्षा गाथा 121
5. द्रव्यसंग्रह गाथा 20
6. जिनागम के आलोक में तीन लोक पृ. 5
7. वही पृ. 6
8. तिलोयपण्णत्ति 1/133
9. त्रिलोकसार गाथा 4
10. गयणंगणे रवि अच्छेइ जेव एह भुवणु ण केण वि धरिउ तेव......। करकंडचरिउ संधि 9 पृ. 131
11. तिलोयपण्णत्ति 1/134—135
12. कार्तिकेयानुप्रेक्षा गाथा 115
13. मूलाचार गाथा 713
14. मूलाचार गाथा 543
15. धवला पुस्तक 4 वृ. 31
16. पाण्डव पुराण 25/108
17. क्षत्रचूडामणि 11/70—72
18. भगवती सूत्र 7/3
19. तिलोयपण्णत्ति गाथा 272
20. तिलोयपण्णत्ति, गाथा 206
21. वही, गाथा 207
22. जिनागम के आलोक में तीन लोक, पृष्ठ 22
23. त्रिलोक भास्कर पृष्ठ 5
24. तिलोयपण्णत्ति गाथा 271—276, त्रिलोक भास्कर गाथा 124—126
25. त्रिलोकसार गाथा 127
26. त्रिलोकसार गाथा 127 से 140 तक
27. आओ लोक की सैर करें पृष्ठ संख्या 6
28. अभिधर्म कोश
29. जैनेन्द्र सिद्धांत कोष भाग 3

---

[29] जैनेन्द्र सिद्धांत कोष भाग 3